

भूकंप के खतरे से 6,500 से ज्यादा बड़े बांधों की जांच करेगा आईआईटी मद्रास का सॉफ्टवेयर



नई दिल्ली। भारत में बांधों की सुरक्षा को लेकर एक महत्वपूर्ण पहल सामने आई है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) मद्रास के शोधकर्ताओं ने ऐसा कंप्यूटर सॉफ्टवेयर तैयार किया है, जो देश के बड़े बांधों पर भूकंप के खतरे का अधिक सटीक आकलन करने में मदद कर सकता है। भारत में 6,500 से ज्यादा बड़े बांध हैं। इनमें से कई बांध काफी पुराने हो चुके हैं और इनके निर्माण के समय आज जैसी भूकंप संबंधी तकनीक उपलब्ध नहीं थी।

यह सॉफ्टवेयर भूकंप के पुराने आंकड़ों, बांध की स्थिति और उसकी बनावट को ध्यान में रखकर यह पता लगाने में मदद करता है कि किसी बांध पर भूकंप का कितना असर हो सकता है। यह शोध %जर्नल ऑफ अर्थ सिस्टम साइंस% में प्रकाशित किया गया है। शोधकर्ताओं ने इस तकनीक को विकसित करने के लिए 2600 ईसा पूर्व से साल 2019 तक आए भूकंपों के आंकड़ों का इस्तेमाल किया है। इसमें 68 हजार से ज्यादा भूकंपों की जानकारी शामिल है। इसके साथ ही देश में मौजूद प्रमुख भूगर्भीय दरारों और फॉल्ट लाइनों की जानकारी को भी जोड़ा गया है।

सॉफ्टवेयर का नाम पीएसएचएडुइंडियाटुआईआईटीएम रखा गया है। इसका इस्तेमाल करने के लिए इंजीनियर किसी बांध की जगह के बारे में जानकारी डाल सकते हैं। इसके बाद सॉफ्टवेयर अलग-अलग स्तर के भूकंप और उनके संभावित असर का आकलन करता है। यह गणना बहुत लंबे समय, यहां तक कि 10 हजार साल तक की संभावित अवधि को ध्यान में रखकर की जा सकती है। अब तक बांधों के भूकंप संबंधी खतरे का आकलन मुख्य रूप से देश के अलग-अलग भूकंपीय क्षेत्रों के आधार पर किया जाता रहा है। इसमें एक बड़े

इलाके को एक ही भूकंप क्षेत्र मानकर वहां के लिए एक सामान्य खतरा तय किया जाता है।

लेकिन एक ही इलाके में बने दो बांधों की स्थिति एक जैसी नहीं होती। उनकी ऊंचाई, आकार, निर्माण सामग्री और जमीन की स्थिति अलग हो सकती है। ऐसे में भूकंप के दौरान दोनों बांधों पर एक जैसा असर होना जरूरी नहीं है। सॉफ्टवेयर 68 हजार से अधिक ऐतिहासिक भूकंपों और प्रमुख भूगर्भीय फॉल्ट लाइनों के आंकड़ों का इस्तेमाल करता है। आईआईटी मद्रास के शोधकर्ताओं ने इसी अंतर को ध्यान में रखा है। उनका सॉफ्टवेयर केवल जमीन के हिलने की तीव्रता नहीं देखता, बल्कि यह भी देखता है कि किसी खास बांध की अपनी कंपन क्षमता क्या है। हर बड़ी संरचना की एक प्राकृतिक कंपन अवधि होती है। इसे आसान भाषा में ऐसे समझा जा सकता है जैसे झूले को उसकी सही गति के साथ धक्का दिया जाए तो वह ज्यादा ऊंचा जाता है। इसी तरह भूकंप की तरंगें अगर किसी बांध की प्राकृतिक कंपन अवधि से मेल खाती हैं, तो बांध पर असर बढ़ सकता है। इस कारण ऊंचे मिट्टी के बांध और मजबूत कंक्रीट के बांध भूकंप की एक जैसी तरंगों पर समान प्रतिक्रिया नहीं देते। नया सॉफ्टवेयर इसी अंतर को ध्यान में रखकर भूकंपीय खतरे का आकलन करता है। शोधकर्ताओं ने इस नई पद्धति को देश के 70 महत्वपूर्ण बांधों पर आजमाया। इसके आधार पर बांधों को कम, मध्यम और ज्यादा भूकंपीय खतरे वाली श्रेणियों में रखा गया। अध्ययन में यह भी सामने आया कि कुछ बांध, जिन्हें सामान्य भूकंपीय नक्शों के आधार पर कम खतरे वाला माना जा सकता था, उनकी अपनी संरचनात्मक विशेषताओं को ध्यान में रखने पर अधिक खतरे वाली श्रेणी में आ सकते हैं। शोधकर्ताओं ने साफ किया है कि यह सॉफ्टवेयर बांध की सुरक्षा का अंतिम प्रमाण नहीं है। यह मुख्य रूप से शुरुआती जांच और प्राथमिकता तय करने के लिए बनाया गया है। सॉफ्टवेयर में बांध के टूटने, दरार पड़ने या अत्यधिक भूकंप के दौरान होने वाले जटिल बदलावों का पूरा हिसाब नहीं लगाया जा सकता। इसके अलावा देश के सभी बांधों के नीचे की मिट्टी और चट्टानों की विस्तृत जानकारी भी उपलब्ध नहीं है। इसलिए प्रारंभिक आकलन में एक सामान्य आधार का इस्तेमाल किया जाता है। जिस बांध में ज्यादा खतरा दिखाई देता है, उसकी आगे विशेषज्ञों द्वारा विस्तृत जांच जरूरी होगी। भारत में कई बांध पुराने हैं और इनके आसपास समय के साथ बड़ी आबादी बस गई है। ऐसे में किसी बड़े भूकंप के कारण बांध को नुकसान पहुंचने पर नीचे रहने वाले लोगों के लिए गंभीर खतरा पैदा हो सकता है। आईआईटी मद्रास का यह सॉफ्टवेयर ऐसे बांधों की पहचान करने में मदद कर सकता है, जहां पहले विस्तृत सुरक्षा जांच की जरूरत है। इससे सीमित इंजीनियरिंग संसाधनों और धन का इस्तेमाल प्राथमिकता के आधार पर किया जा सकेगा। बढ़ती भूकंपीय चुनौतियों और पुराने होते बांधों के बीच ऐसी वैज्ञानिक तकनीक देश की बांध सुरक्षा व्यवस्था को मजबूत करने में उपयोगी साबित हो सकती है।

केरल में भारी बारिश से तबाही, 5 की मौत; 2 लोग लापता

मलप्पुरम। केरल में मूसलाधार बारिश के बीच भूस्खलन और अचानक आई बाढ़ से अलग-अलग घटनाओं में कम से कम पांच लोगों की मौत हो गई, जबकि दो लोग अभी भी लापता हैं। लगातार बिगड़ते हालात को देखते हुए प्रशासन ने राहत और बचाव कार्य तेज कर दिए हैं। अधिकारियों को स्थिति की लगातार समीक्षा करने और संवेदनशील इलाकों में लोगों को सुरक्षित स्थानों पर पहुंचाने के निर्देश दिए गए हैं। मलप्पुरम जिले के निलंबूर-अमरंबलम इलाके में रविवार शाम कोट्टापुझा नदी में अचानक आई बाढ़ में पांच लोग बह गए। बताया गया कि वंडूर का एक समूह नदी में नहाने पहुंचा था। अचानक जलस्तर बढ़ने से सभी पानी के तेज बहाव में बह गए। एक व्यक्ति को स्थानीय निवासी ने बचा लिया, जबकि दो लोगों के शव बरामद किए गए। दो अन्य अब भी लापता हैं। उनकी तलाश के लिए विशेष आपदा प्रबंधन टीम तैनात की गई है। कोट्टायम जिले के टीकोय के पास वेलाथुसेरी में भूस्खलन की चपेट में आने से तमिलनाडु की 35 वर्षीय महिला संगीता अरुल लाल की मौत हो गई। वह अपनी सहेली के साथ वागामोन से लौट रही थीं। सड़क पर पहाड़ी से खिसकी मिट्टी उनके ऊपर गिर गई। हादसे में उनकी सहेली घायल हुई हैं।

भारत में बदल रहा गर्मी का कैलेंडर, उत्तर-पश्चिमी हिस्सों में समय से पहले बढ़ रहे चरम गर्मी के दिन



नई दिल्ली। गर्मी अब केवल गर्मियों की समस्या नहीं रह गई। दुनिया के कई हिस्सों में बेहद गर्म दिनों का सिलसिला अब पारंपरिक गर्मी के मौसम से भी बाहर निकल रहा है। इसका असर भारत में भी दिखाई दे रहा है। एक नए वैश्विक अध्ययन के मुताबिक, उत्तर-पश्चिमी भारत में गर्मी के चरम दिनों का विस्तार मुख्य रूप से गर्मियों से पहले यानी बसंत की ओर हुआ है।

यह बदलाव इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि अप्रैल या मई में पड़ने वाली असामान्य गर्मी शरीर के लिए अधिक चुनौतीपूर्ण हो सकती है। आमतौर पर इंसान को लगातार गर्म मौसम के साथ तालमेल बैठाने में समय लगता है। ऐसे में मौसम के सामान्य गर्म होने से पहले ही अत्यधिक गर्मी पड़ने लगे तो स्वास्थ्य जोखिम बढ़ सकता है। यह अध्ययन अमेरिका के नासा गोडार्ड इंस्टीट्यूट फॉर स्पेस स्टडीज (जीआईएसएस), उसके सहयोगियों और न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है। इस अध्ययन में वैज्ञानिकों ने पिछले 45 वर्षों के जलवायु से जुड़े वैश्विक आंकड़ों का विश्लेषण किया है, जिसके नतीजे प्रतिष्ठित जर्नल एजीयू एडवांसेज में प्रकाशित हुए हैं।

अध्ययन में शोधकर्ताओं ने 1980 से 1989 के आंकड़ों को आधार मानते हुए उनकी तुलना 2015 से 2024 के आंकड़ों से की है। उन्होंने किसी स्थान पर रोजाना दर्ज तापमान के सबसे गर्म पांच फीसदी दिनों को चरम गर्मी के दिन माना। विश्लेषण से पता चला कि सूखी गर्मी का मौसम दुनिया के करीब 50 फीसदी हिस्सों में और नमी वाली गर्मी का मौसम करीब 48 फीसदी भू-भाग में पहले की तुलना में लंबा हुआ है। हालांकि लेकिन यह बदलाव हर जगह एक जैसा नहीं था। कुछ क्षेत्रों में चरम गर्मी, गर्मियों के बाद शरद ऋतु यानी सितंबर से अक्टूबर की ओर बढ़ी, जबकि कुछ क्षेत्रों में यह गर्मियों से पहले अप्रैल-मई की ओर खिसकी है। रिसर्च के मुताबिक उत्तर-पश्चिमी भारत भी उन क्षेत्रों में शामिल है जहां गर्मी का विस्तार मुख्य रूप से गर्मियों से पहले हुआ है। अध्ययन में पश्चिमी यूरोप और दक्षिणी अफ्रीका के साथ उत्तर-पश्चिमी भारत में भी वसंत की ओर चरम गर्मी के बढ़ने का पैटर्न दर्ज किया गया। अध्ययन की एक अहम बात यह है कि चरम गर्मी के मौसम में यह बदलाव केवल औसत तापमान बढ़ने से पूरी तरह नहीं समझाया जा सकता। शोधकर्ताओं ने यह भी जांचा कि अगर केवल 1980 के दशक के मौसम में आज जितनी औसत गर्मी जोड़ दी जाए तो चरम गर्मी के दिनों का समय किस तरह बदलना चाहिए। इससे गर्मी के मौसम के बीच में होने वाले बदलावों को तो काफी हद तक समझाया जा सका, लेकिन गर्मी के मौसम के किनारों, यानी शुरुआत और अंत में हो रहे बदलावों को नहीं। करीब 80 फीसदी वैश्विक भू-भाग में बसंत और शरद ऋतु के बीच चरम गर्मी के बदलाव का पैटर्न केवल औसत तापमान बढ़ने की गणना से मेल नहीं खाता था।

शोधकर्ताओं का मानना है कि क्षेत्रीय स्तर पर बारिश में बदलाव, भूमि उपयोग में हो रहे बदलाव और बड़े पैमाने पर बदलते मौसम के पैटर्न भी इसमें भूमिका निभा सकते हैं। हालांकि, इन कारकों का योगदान कितना है, इसे समझने के लिए आगे और शोध की जरूरत

है। भारत की बात करें तो देश में गर्मी का मौसम पहले ही लंबा और अधिक चुनौतीपूर्ण हो चुका है। ऐसे में अगर अत्यधिक गर्म दिनों का दायरा पारंपरिक गर्मी के महीनों से बाहर बढ़ता है तो इसका सीधा असर लोगों की तैयारी और स्वास्थ्य सुरक्षा पर पड़ सकता है। आम तौर पर हीट अलर्ट, पेयजल व्यवस्था, गर्मी से बचने के लिए बनाए राहत केंद्र और बचाव की योजनाएं गर्मियों के तय पारम्परिक कैलेंडर के हिसाब से तैयार की जाती हैं। लेकिन अगर भीषण गर्मी अप्रैल से पहले शुरू हो या गर्मी के मौसम के बाद भी बनी रहे तो इन व्यवस्थाओं को भी उसी हिसाब से लंबे समय तक सक्रिय रखना पड़ सकता है।

बता दें कि क्लाइमेट सेंटरल ने भी आंकड़ों और विशेषज्ञों के हवाले से अपनी रिपोर्ट में जानकारी दी है कि जलवायु में आते बदलावों के चलते भारतीय ऋतुओं में बदलाव आ रहा है। यह प्रभाव सर्दी के मौसम पर विशेष रूप से दिख रहा है। देश में कहीं सर्दी के दौरान तापमान बढ़ रहा है, तो कहीं कम हो रहा है। क्लाइमेट ट्रेंड्स के भी मुताबिक जैसे-जैसे जलवायु में आते बदलावों के कारण तापमान में वृद्धि हो रही है, देश भर में स्थानीय मौसम के पैटर्न में महत्वपूर्ण बदलाव हो रहे हैं।

यह भी सामने आया है कि भारत के पश्चिमी हिस्सों में सर्दियों के दौरान फरवरी और जनवरी के बीच गर्मी के रुझान में काफी अंतर होता है। गर्म मौसम की स्थिति में तेजी से बदलाव की प्रवृत्ति देखी गई है, जिससे बसंत का मौसम सिकुड़ रहा है। अध्ययन की प्रमुख शोधकर्ता और नासा गोडार्ड इंस्टीट्यूट फॉर स्पेस स्टडीज की जलवायु वैज्ञानिक कैथरीन इवानोविच के मुताबिक, गर्मी के मौसम से पहले या बाद में पड़ने वाली चरम गर्मी इसलिए अधिक खतरनाक हो सकती है क्योंकि उस समय शरीर ने अभी गर्मी के अनुकूल खुद को पूरी तरह ढाला नहीं होता या गर्मियों के लंबे तनाव से उबर रहा होता है।

अध्ययन में शोधकर्ताओं ने सूखी गर्मी के साथ-साथ नमी वाले गर्म दिनों का भी अध्ययन किया है। इसमें तापमान के साथ आर्द्रता और सूरज की गर्मी को शामिल किया जाता है, ताकि यह समझा जा सके कि गर्मी इंसानी शरीर पर वास्तव में कितना दबाव डालती है। नमी अधिक होने पर शरीर पसीने के जरिए खुद को ठंडा नहीं कर पाता। इसलिए समान तापमान पर भी अधिक नमी वाली गर्मी स्वास्थ्य के लिए अधिक खतरनाक हो सकती है। यही वजह है कि केवल मौसम के ऐप पर दिख रहा तापमान किसी दिन के वास्तविक स्वास्थ्य जोखिम की पूरी तस्वीर नहीं देता। तापमान के साथ आर्द्रता और शरीर पर पड़ने वाले गर्मी के दबाव को भी देखना जरूरी है। रिपोर्ट के मुताबिक चरम गर्मी के मौसम में बदलाव का असर केवल स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है। लंबे समय तक सूखी गर्मी रहने से फसलों और पारिस्थितिकी तंत्र पर दबाव बढ़ सकता है, जबकि अत्यधिक नमी वाली गर्मी इंसानी स्वास्थ्य के लिए विशेष रूप से खतरनाक हो सकती है। इसके अलावा, अगर चरम गर्मी का मौसम आगे खिसकता है तो वह दूसरी मौसमी आपदाओं के साथ भी टकरा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में एक के बाद एक या एक साथ कई तरह के जोखिम सामने आ सकते हैं, जिससे लोगों और सरकार पर दबाव और बढ़ सकता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि इस अध्ययन को अभी शुरुआती लेकिन महत्वपूर्ण प्रमाण के तौर पर देखा जाना चाहिए। चरम गर्मी की घटनाएं स्वभाव से ही दुर्लभ होती हैं और सामान्य गर्मी के मौसम से बाहर होने वाली घटनाएं उससे भी दुर्लभ हैं।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने पैदल भ्रमण कर सिंहस्थ 2028 के विकास कार्यों का लिया जायजा

स्थानीय रहवासियों से किया संवाद, बच्चों से हाथ मिलाकर बढ़ाया उत्साह, चौड़ीकरण के लिए स्वेच्छा से सहयोग करने वाले नागरिकों का मुख्यमंत्री ने जताया आभार

भोपाल मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने रविवार को सिंहस्थ महापर्व के लिए उज्जैन शहर में चल रहे विभिन्न विकास एवं निर्माण कार्यों का पैदल भ्रमण कर निरीक्षण किया। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने नीलगंगा से केटीएम गैल इंडिया चौराहा तक मार्ग चौड़ीकरण कार्य तथा शांतिनगर से इंदौर रोड तक किए जा रहे नवीन मार्ग निर्माण कार्य की प्रगति का जायजा लिया। उन्होंने मौके पर उपस्थित अधिकारियों से निर्माण कार्यों की प्रगति की जानकारी प्राप्त कर सिंहस्थ की दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्यों को प्राथमिकता के साथ निर्धारित समय-सीमा में पूर्ण करने के निर्देश दिए।

भ्रमण के दौरान मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने मार्ग में स्थानीय रहवासियों से संवाद किया। स्थानीय नागरिकों ने पुष्प वर्षा कर मुख्यमंत्री का स्वागत किया। मुख्यमंत्री ने बच्चों से हाथ मिलाकर उनका उत्साहवर्धन किया और स्थानीय नागरिकों द्वारा शहर के विकास के लिए किए जा रहे सहयोग की सराहना की। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि बाबा महाकाल मंदिर जाने का मुख्य मार्ग सिंधी कॉलोनी चौराहे से नानाखेड़ा बस स्टैंड तक है। नानाखेड़ा बस स्टैंड से आवागमन के लिए वैकल्पिक मार्ग भी उपलब्ध रहेगा। यह शहर के मध्य से गुजरने वाला महत्वपूर्ण मार्ग है, जो पुराने शहर को नए शहर से एलिवेटेड ब्रिज के माध्यम से जोड़ेगा। उन्होंने कहा कि मार्ग के चौड़ीकरण के लिए उज्जैन के नागरिकों ने स्वेच्छा से अपने मकानों को पीछे करने में सहयोग किया है। यह उज्जैन की गौरवशाली विरासत और यहां के नागरिकों की विकास के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है। देवस्थलों को लेकर भी नागरिकों ने सहजता से अपने मंदिरों को पीछे किया है। स्थानीय रहवासियों ने चौड़ीकरण कार्य के लिए अपने मकान, जमीन और दुकानें उपलब्ध कराकर सरकार के विकास कार्यों में महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि जिन स्थानों पर विकास कार्यों के लिए मकान और दुकानें प्रभावित हो रही हैं, वहां भी स्थानीय रहवासी फूलों से स्वागत कर रहे हैं। यह उज्जैन के नागरिकों



के बड़े मन और विकास के प्रति उनकी सकारात्मक भावना को दर्शाता है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि सिंहस्थ महापर्व के दौरान करोड़ों श्रद्धालु उज्जैन आएंगे। उनकी सुविधाओं और व्यवस्थाओं की चिंता करना केवल सरकार की ही नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक वर्ग की जिम्मेदारी है। उज्जैन के सभी समाजों के नागरिक शहर के विकास और सिंहस्थ की तैयारियों में सहयोग कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि जिस भाव और समर्पण के साथ नागरिक चौड़ीकरण एवं अन्य विकास कार्यों में सहयोग कर रहे हैं, वह सराहनीय है, उसके लिए सभी नागरिकों को बधाई। सरकार भी पूरी प्रतिबद्धता के साथ ठोस निर्णय लेते हुए उज्जैन में बेहतर और गुणवत्तापूर्ण विकास कार्य सुनिश्चित करेगी। इन विकास कार्यों के माध्यम से उज्जैन के साथ ही प्रदेश और देश की छवि को और बेहतर बनाने का प्रयास किया जा रहा है। निरीक्षण के दौरान राज्यसभा सांसद बालयोगी श्री उमेशनाथ महाराज, विधायक श्री अनिल जैन कालूहेड़ा, सिंहस्थ प्राधिकरण के अध्यक्ष श्री जगदीश अग्रवाल, नगर अध्यक्ष श्री संजय अग्रवाल सहित अन्य जनप्रतिनिधि व प्रशासनिक अधिकारी मौजूद रहे।

धार्मिक पर्यटन के प्रमुख केंद्र के रूप में तेजी से विकसित हो रहा उज्जैन

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि महाकाल की नगरी उज्जैन में प्रतिवर्ष श्रद्धालुओं की संख्या मंर निरंतर वृद्धि हो रही है। पहले जहां लगभग 60 से 70 लाख श्रद्धालु उज्जैन आते थे, वहीं पिछले वर्ष लगभग 8 करोड़ श्रद्धालुओं का

आगमन हुआ। इस वर्ष श्रद्धालुओं की संख्या 12 करोड़ से अधिक होने की दिशा में बढ़ रही है। अन्य राज्यों से उज्जैन आने वाले श्रद्धालुओं की बड़ी संख्या है। उन्होंने कहा कि उज्जैन और इंदौर का क्षेत्र तेजी से धार्मिक पर्यटन केंद्र के रूप में उभर रहा है। धार्मिक पर्यटन के विस्तार से क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में भी व्यापक परिवर्तन हो रहा है। आर्थिक विकास की दृष्टि से भी नए अवसर और संभावनाएं सामने आ रही हैं। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि बढ़ती श्रद्धालु संख्या और सिंहस्थ महापर्व को ध्यान में रखते हुए सरकार पूरी प्रतिबद्धता के साथ आवश्यक व्यवस्थाएं विकसित कर रही है। सड़क, यातायात, आवागमन और अन्य आधारभूत सुविधाओं के विस्तार के लिए व्यापक स्तर पर विकास कार्य किए जा रहे हैं, ताकि श्रद्धालुओं और नागरिकों को बेहतर सुविधाएं उपलब्ध हो सकें।

सूरज की चमक ने लगाया कोयले पर ब्रेक-दो वर्षों में बिजली की मांग बढ़ने के बाद भी नहीं बढ़ा कोयला-बिजली उत्पादन

मुंबई। भारत की बढ़ती बिजली की भूख के बीच ऊर्जा क्षेत्र की तस्वीर तेजी से बदल रही है। 2024 की पहली छमाही से 2026 की पहली छमाही के बीच देश में बिजली की मांग करीब 7 फीसदी बढ़ी और करीब 63 टेरावाट-घंटे अतिरिक्त बिजली की जरूरत पड़ी। खास बात यह है कि यह पूरी अतिरिक्त जरूरत कोयले से नहीं, बल्कि स्वच्छ ऊर्जा ने पूरी की। इसी अवधि में स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों से करीब 70 टेरावाट-घंटे अतिरिक्त बिजली मिली, जिसमें अकेले सौर ऊर्जा का योगदान 44 टेरावाट-घंटे रहा।

विश्लेषण के मुताबिक, 50 से अधिक वर्षों में पहली बार ऐसा हुआ है जब बिजली की मांग बढ़ने के बावजूद लगातार दो वर्षों में कोयला-आधारित बिजली उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई। यानी घरों में पंखे-कूलर और एसी चलाने से लेकर उद्योगों की बढ़ती जरूरत तक, बिजली की अतिरिक्त मांग का बोझ इस बार मुख्य रूप से सूरज, हवा और पानी ने संभाला।

लेकिन तस्वीर पूरी तरह साफ नहीं है। इसी दौरान 8.5 गीगावाट नई कोयला बिजली क्षमता जुड़ी और जून 2026 तक करीब 43 गीगावाट क्षमता निर्माणाधीन थी। वहीं 2026 की पहली छमाही में भारत का कुल सीओ₂ उत्सर्जन सालाना आधार पर 3.7 फीसदी बढ़ा, मुख्य रूप से स्टील और सीमेंट जैसे उद्योगों के बढ़ते उत्सर्जन के कारण।

इसका मतलब साफ है, भारत के बिजली क्षेत्र में स्वच्छ ऊर्जा ने बड़ी जगह बनाई है, लेकिन देश की पूरी ऊर्जा व्यवस्था अभी कोयले से मुक्त नहीं हुई है।

प्लास्टिक रीसाइक्लिंग के आंकड़े चमकदार, फिर शहरों में कचरे के ढेर क्यों?

नई दिल्ली। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) के नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, भारत ने 2022 में ईपीआर यानी विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व व्यवस्था लागू होने के बाद से 170 लाख टन प्लास्टिक पैकेजिंग कचरे का पुनर्चक्रण (रीसाइकल) किया है। इस प्लास्टिक पुनर्चक्रण कारोबार का अनुमानित मूल्य लगभग 2,500 करोड़ रुपये है, जो चार चंद्रयान-3 मिशन के व्यय को पूरा करने के लिए पर्याप्त है। सीपीसीबी के अनुमानों के अनुसार, भारत में प्रतिवर्ष 38 लाख टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न होता है, इसलिए हम कम से कम चार-पांच वर्षों में उत्पन्न होने वाले प्लास्टिक कचरे से छुटकारा पाने में सफल रहे हैं। यदि ऐसा है, और जून 2026 के आधिकारिक दस्तावेजों के आधार पर यह स्पष्ट है, तो फिर हमें अपने शहरों, गांवों और नदियों में प्लास्टिक कचरे के पहाड़ क्यों दिखाई देते हैं? जाहिर है कुछ तो गड़बड़ है। ईपीआर अपशिष्ट प्रबंधन के लिए विश्व स्तर पर उपयोग किया जाने वाला एक साधन है। यह प्लास्टिक के संग्रहण और पुनर्चक्रण की जिम्मेदारी इसके निर्माताओं, उत्पादकों, आयातकों या ब्रांड मालिकों (पीआईबीओ) पर डालता है। वर्ष 2023-24 से भारत में पीआईबीओ को अपने द्वारा उत्पादित प्लास्टिक कचरे का 100 फीसदी संग्रहण करना अनिवार्य है। पिछले वर्ष तक पीआईबीओ का लक्ष्य इस एकत्रित पैकेजिंग सामग्री के 40-60 फीसदी का पुनर्चक्रण करना था। वर्ष 2026-27 के लिए

प्लास्टिक की श्रेणी के आधार पर लक्ष्य 50-70 फीसदी तक है। उदाहरण के लिए श्रेणी 2 प्लास्टिक के पीआईबीओ, जिसमें चिप्स से लेकर शैंपू पाउच तक की वस्तुओं को लपेटने के लिए उपयोग की जाने वाली एकल से बहुस्तरीय पैकेजिंग शामिल है, को इस वर्ष से अपनी प्लास्टिक पैकेजिंग का 100 फीसदी संग्रहण करना और उसके 50 फीसदी का पुनर्चक्रण करना अनिवार्य है। पीआईबीओ पुनर्चक्रण के वास्ते प्लास्टिक वेस्ट प्रोसेसर्स (पीडब्ल्यूपी) के साथ अनुबंध करते हैं। इन इकाइयों का सीपीसीबी में पंजीकरण अनिवार्य है। आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, 1,000 से अधिक पंजीकृत पीडब्ल्यूपी हैं। इन यूनिट को सीपीसीबी द्वारा निर्धारित दरों के अनुसार भुगतान किया जाता है, जो श्रेणी 1 (पेट बोतलें और इसी तरह की वस्तुएं) के लिए लगभग 870 रुपये प्रति टन, लचीले प्लास्टिक (पैकेज्ड खाद्य पदार्थ और अन्य घरेलू सामान) के लिए लगभग 1,500 रुपये प्रति टन और कम्पोस्टेबल सामग्री के लिए लगभग 2,500 रुपये प्रति टन है। पुनर्चक्रित प्लास्टिक का प्रत्येक टन एक ईपीआर प्रमाणपत्र के बराबर होता है। लगभग 1,500 रुपये प्रति टन की औसत दर को ध्यान में रखते हुए भारत द्वारा 2022 से अब तक पुनर्चक्रित 170 लाख टन प्लास्टिक कचरे का मूल्य लगभग 2,500 करोड़ रुपये है।

वैज्ञानिकों ने डिजिटाइज किया वैक्रिटा का कंकाल, अब श्रीडी मॉडल के जरिए सुरक्षित रहेगी याद

न्यूयार्क। दुनिया के सबसे छोटे और सबसे दुर्लभ समुद्री स्तनपायी जीव वैक्रिटा (फोकोएना साइनस) के अस्तित्व पर अब तक का सबसे बड़ा संकट मंडरा रहा है। मेक्सिको की कैलिफोर्निया खाड़ी के उथले पानी में पाई जाने वाली इस प्रजाति की संख्या घटते-घटते अब महज कुछ ही बची है। इस गंभीर स्थिति को देखते हुए शोधकर्ताओं ने एक अनूठी पहल की है।

उन्होंने एक मादा वैक्रिटा के बेहद नाजुक और दुर्लभ कंकाल को डिजिटल श्रीडी मॉडल में बदल दिया है। इस पहल का मुख्य उद्देश्य इस प्रजाति के शारीरिक ढांचे को हमेशा के लिए सुरक्षित रखना है, ताकि यदि यह जीव पूरी तरह से विलुप्त भी हो जाए, तो भी विज्ञान और शिक्षा जगत के पास इसका सटीक रिकॉर्ड मौजूद रहे यह डिजिटल अध्ययन हाल ही में %मरीन मैमल्स साइंस% नामक पत्रिका में प्रकाशित किया गया है। फ्लोरिडा अटलांटिक यूनिवर्सिटी (एफएयू) के शोधकर्ताओं ने सैन डिएगो नेचुरल हिस्ट्री म्यूजियम, सीवर्ल्ड कैलिफोर्निया और नेशनल ओशनिक एंड एटमोस्फेरिक एडमिनिस्ट्रेशन (नोआ) फिशरीज के साथ मिलकर इस प्रोजेक्ट को पूरा किया है। जिस कंकाल का स्कैन किया गया है, उसे

1960 के दशक में एकत्र करके म्यूजियम को सौंपा गया था। चूंकि यह कंकाल अत्यधिक दुर्लभ और नाजुक है, इसलिए इसे छूने या आम लोगों के प्रदर्शन के लिए बाहर निकालने की अनुमति बहुत कम दी जाती है। अब इसे उच्च तकनीक से डिजिटाइज करके डिजिटल प्लेटफॉर्म %मॉर्फोसोर्स% पर मुफ्त में उपलब्ध करा दिया गया है। इसकी मदद से दुनिया के किसी भी कोने में बैठा कोई भी व्यक्ति, छात्र या शोधकर्ता इस कंकाल की हर हड्डी को किसी भी कोण से घुमाकर, बड़ा करके और गहराई से देख सकता है। इसके अलावा इन श्रीडी मॉडल्स की मदद से संग्रहालयों और कक्षाओं के लिए वैक्रिटा के हूबहू और सटीक मॉडल श्रीडी प्रिंट भी किए जा सकेंगे। वैक्रिटा के छोटे से शरीर और उसकी जटिल हड्डियों को स्कैन करना आसान काम नहीं था। इसके लिए वैज्ञानिकों ने मल्टी-स्केल इमेजिंग तकनीक का सहारा लिया। सबसे पहले, अस्पतालों में इस्तेमाल होने वाली मेडिकल सीटी स्कैन तकनीक से पूरे शरीर और बड़ी हड्डियों के ढांचे की तस्वीरें ली गईं। इसके बाद, हर एक हड्डी की अलग-अलग उच्च-गुणवत्ता वाली तस्वीरें खींची गईं। अंत में, हड्डियों की अंदरूनी संरचना को देखने



के लिए %माइक्रो-सीटी% तकनीक का इस्तेमाल किया गया। माइक्रो-सीटी इतनी सूक्ष्म तकनीक है जो इंसान के बाल की चौड़ाई से भी छोटे आकार की परतों को रिकॉर्ड कर सकती है। इस प्रक्रिया में हड्डियों के हजारों क्रॉस-सेक्शनल चित्र तैयार हुए। विशेष सॉफ्टवेयर की मदद से शोधकर्ताओं ने हर एक हड्डी को अलग करके पुनः जोड़ा, जिससे एक बहुस्तरीय और बेहद सटीक श्रीडी डिजिटल मॉडल तैयार हो पाया। लगभग 1.5 मीटर लंबे इस खूबसूरत जीव की आंखों और मुंह के चारों

ओर काले घेरे होते हैं, जो इसे एक अलग पहचान देते हैं। विज्ञान को 20वीं सदी के उत्तरार्ध में ही इसके अस्तित्व का पता चला था, लेकिन कुछ ही दशकों में यह जीव विलुप्ति की कगार पर पहुंच गया। वैक्रिटा के विनाश का सबसे बड़ा कारण समुद्र में बिछाए जाने वाले %गिलनेट% यानी अवैध जाल हैं। हालांकि मछुआरे वैक्रिटा का शिकार नहीं करते, लेकिन वे %तोतोआबा% नामक एक अन्य दुर्लभ मछली को पकड़ने के लिए ये जाल बिछाते हैं। तोतोआबा का तैरने वाला मूत्राशय (स्विम ब्लैडर) अंतरराष्ट्रीय चोर बाजार

में बहुत ऊंची कीमतों पर बिकता है। इस अवैध व्यापार के चक्र में बिछाए गए जालों में वैक्रिटा गलती से फंस जाती है और दम घुटने से उनकी मौत हो जाती है। वैक्रिटा आज पूरी दुनिया में समुद्री जैव विविधता के संरक्षण का एक बड़ा प्रतीक बन चुकी है। वैज्ञानिकों और संरक्षणवादियों का कहना है कि यदि इनके प्राकृतिक आवास से गिलनेट को तुरंत नहीं हटाया गया, तो इन्हें बचाना नामुमकिन हो जाएगा। इस श्रीडी प्रोजेक्ट से जुड़े शोधकर्ताओं को उम्मीद है कि यह डिजिटल आर्काइव (अभिलेखागार) न केवल एक अत्यंत मूल्यवान वैज्ञानिक रिकॉर्ड को सुरक्षित रखेगा, बल्कि आम लोगों में इस संकटग्रस्त जीव के प्रति जागरूकता भी पैदा करेगा। जब छात्र और शोधकर्ता इस दुर्लभ जीव की शारीरिक बनावट को डिजिटल माध्यम से करीब से देखेंगे, तो समुद्री जीवों के संरक्षण की आवश्यकता को और अधिक मजबूती से समझा जा सकेगा।